ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL04292
RNI REG. NO. UPBIL/2014/66218 PP. NO.- 404-406

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-13, No.-II, Issues-17, YEAR- Sept. -2020

सामान्य अपराधी का मनोविज्ञान

अवध किशोर सिंह

असिस्टेन्ट प्रोफेसर, मनोविज्ञान विभाग, ब्रजलाल प्रसाद महाविद्यालय, मसौढ़ी–पटना (बिहार) भारत

Received- 05.08.2020, Revised- 09.08.2020, Accepted - 12.08.2020 E-mail: dr.ramnyadav@gmail-com

सारांश : *मनोविज्ञान और अपराध विज्ञान दोनों उपयुक्त कारणों से एक दूसरे के पूरक भी हैं। व्यक्तित्व की सही परख दोनों का विषय है चूँकि इसी परख पर मनुष्य के आचरण की परख संभव होती है। यों अबतक अपराधियों की असामान्यता या अस्वाभाविकता या अमानकता का ही विशेष अध्ययन हुआ है, अपराधी को असामान्य व्यक्ति के रूप में ही विश्लेषित किया गया है, जो बहुत अंशों में मान्य तथा सही भी है, तथापि अपराधियों के मनोविज्ञान को भी दो कोटियों में विभक्त करना संगत हो चला है और प्रतिपाद्य विषय के रूप में ग्राह्य भी है। इस दिशा में अब और भी प्रयास करना अपेक्षित है। मानकता स्वयं अत्यंत ही विवादास्पद विषय है। कौन आचरण मानक है और कौन अमानक, यह निर्धारित करना सहज नहीं। इसे निर्धारित करने के पूर्व जो कुछ भी अमानक है, उसे बिलगाना आवश्यक हो जाता है। आपराधिकी जो न तो मनोविक्षिप्त, न मनस्तापी, न मनश्चिकित्सीय है, न मानसिक रोगी या अविकसित । परंतु इस परिभाषा की त्रुटि यह रह जाती है कि यह पोजिटिव, अस्तित्त्ववादी व्याख्या नहीं प्रस्तुत करती है। अर्थात् क्या मानकता का कोई प्रत्यक्ष रूप नहीं खींचा जा सकता है ?*

कुंजीभूत शब्द– मनोविज्ञान, व्यक्तित्व, परख, आचरण, असामान्यता, अस्वाभाविकता, अमानकता, अपराधी, मानकता।

दुर्खीम ने तो अपराध को ही समाज का स्वाभाविक रूप माना है। स्वस्थ से स्वस्थ समा में भी अपराध होता है, यद्यपि इनके अनुसार इस धारणा से यह बात पुष्ट नहीं होती है कि अपराधी भी बिल्कुल ही स्वस्थ तथा सामान्य प्राणी होता है। अपराध की वृद्धि से सामाजिक ह्रास का बोध होता है और दुर्खीम मत में किसी स्थान के किसी काल के अपराध स्तरमात्र का ही मनन अपेक्षित हो सकता है। जहाँ तक किसी अपराधी की मानसिक अवस्था के परीक्षण, मानवता की धारणा प्रयोज्य है, वहाँ तक इस प्रकार के अपराधियों की जो औसत "मानसिक" अवस्था होती है, या अध्ययन के पश्चात् जो परिणाम निकलता है, उनके संदर्भ में ही यह आंकी जा सकती है। इस आंकने की प्रक्रिया में निर्धारक के निजी मान–मूल्यों की भी छवि उतर जा सकती है. यह संभव है, यही नहीं समाज विशेष, संस्कृति विशेष की मर्यादाओं का भी प्रतिबिम्बन हो जा सकता है। ऐसा होना सर्वथा स्वाभाविक भी है। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि जो बहुमत से मान्य है, जो व्यापकतः अनुपालनीय है, वह मानकता की व्याख्या में अत्यंत सहायक उपकरण हो जाता है। समंजन की अपेक्षाएँ ही आचरण को मानक तथा अमानक ठहराती हैं। मानकता सामाजिक जीवन की अपेक्षाओं के समंजन से निकटतम रूप से संबंधित है। मानकता की मात्राएँ समंजन की श्रेणियों पर आधारित होकर माप्य होती हैं। इसलिए मनस्तापी बहिर्मुखी से कम मननीय होता है, चूँकि जहाँ बहिर्मुखी सामंजस्य शीघ्रतः स्थापित कर लेता है, वहाँ मनस्तापी को घोर अंतर्द्वन्द्व कर समाज से कामचलाऊ सामंजस्य करना पड़ता है। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि आपराधिकी के लिए मानकता की व्यावहारिक परिभाषा यह हो सकती है कि यह एक प्रकार की मानसिक अवस्था है, जिसमें किसी प्रकार की विशेष चेष्टा या मानसिक अंतर्द्वन्द्व परीक्षित किए बिना आपराधिक कानून तथा दंड व्यवस्था की मान संबंधी अपेक्षा की पूर्ति हो जाती है। इस प्रकार आपराधिक मनोविज्ञान को पृथक् स्वरूप प्राप्त हो जाता है और आपराधिक मनोविज्ञान को समाज मनोविज्ञान या सामान्य मनोविज्ञान से मुक्त कराया जा सकता है, भले ही सीमाकरण बिल्कुल ही संभव न हो । समाज विज्ञान व्यक्ति के पर्यावरण में उनकी अपराधशीलता निर्धारित करता है। मनोविज्ञान व्यक्ति के गुण में ही इसे स्थापित करता है। अर्थात् एक ही प्रकार की परिस्थिति में कौन–सा व्यक्ति मानक का अनुपालन करेगा और कौन–सा व्यक्ति इसका उल्लंघन करेगा, यह मनोविज्ञानिक प्रमाणित तथा पूर्वांकित कर सकता है। दोनों विज्ञानों में कोई अन्तर्विरोध नहीं, बल्कि समाज–विज्ञान, जीव–विज्ञान तथा मनोविज्ञान के एकीकरण की आवश्यकता है।

समुन्नत वर्गीकरण, कम सामान्यीकरण तथा सर्वाधिक सतर्कता के कारण कई दशकों में सामान्य अपराधियों तथा अनापराधियों के मनोवैज्ञानिक विशिष्टताओं की परख स्पष्ट हो सकती है, अन्यथा लाम्ब्रोसो या गोरिंग के सामान्यीकरणों का ही सर्वाधिक निदान होता रहा है। यद्यपि स्कूचस्लर तथा क्रेसी ने 113 व्यक्तियों के अध्ययन के पश्चात् यह प्रतिपादित किया है कि व्यक्तित्व के गुणों या दोषों में अपराधियों तथा अनापराधियों में साधारणतः कोई उल्लेखनीय भेद नहीं होता है और अपराधिता तथा व्यक्ति में

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-13, No.-II, Issues-17, YEAR- Sept. -2020

कोई सम्बन्ध इन प्राणियों के सहारे नहीं व्यक्ति किया जा सकता है, तथापि क्लीनार्ड आदि ने इन निष्कर्षों के अध्ययन की ही त्रुटियों के आधार पर खण्डन किया है, जो ज्ञातव्य है। इधर मिन्नीस्टा की एक अध्ययन संस्था ने अपराधियों या अपचारियों के व्यक्तित्व वैशिष्टयों को अनापराधियों या अनापचार के व्यक्तित्व वैशिष्टयों से मिलाकर अपराधी व्यक्तित्व का कामचलाऊ रूप प्रस्तुत किया है। पूर्वांकन या परख की दिशा में सर्वांगीण सफलता का दावा न करते हुए भी इस संस्था ने अपराधियों के मनोविज्ञान की प्रस्तुति में उल्लेखनीय पहल की है। टी० ग्रिगियट ने अपने ग्रन्थ "दमन" में भी यह बात दर्शायी है कि दमनकारी पर्यावरण में व्यक्तित्व में मापने योग्य परिवर्तन आ जाते हैं। इन्होंने पन्द्रह पोलिश विस्थापियों की जोड़ियों का अध्ययन किया है। इनमें एक जोड़ी अपचारियों की और दूसरी अनापचारियों की थी, परन्तु विस्थापन, नागरिकता, राष्ट्रीयता तथा धर्म के समान उपकरण थे। ऐसे विस्थापित अपचारियों में सामाजिक अवस्थाओं के प्रति विद्रोहात्मकता उग्र पाई गई और उनके द्वारा दूसरों का जो उत्पीड़न किया जाता था उसकी समझ भी स्पष्ट नहीं पाई गई, जबकि विस्थापित अर्थात् समाज की उसी श्रेणी के अनापचारियों में यह प्रवृत्ति विद्यमान नहीं पाई गई। अपचारियों में समाज द्वारा इन्हें उपेक्षित किए जाने का भाव न प्रबल होता है।

गहन विश्लेषण तथा वैज्ञानिक अध्ययन से यह प्रमाणित हो चला है कि वर्ग के रूप में अपचारियों में समानता से अधिक विभिन्नता होती है और यद्यपि अन्वेषण से कुछ विशिष्टताएँ इनमें समानतः पाई जाती हैं. तथापि एक ही ढाँचे में सभी अपचारी ढले प्रतीत नहीं होते। यह निष्कर्ष अपराधी के व्यक्तित्व की पहचान की सार्थकता उद्घोषित करता है।

"किशोर अपचार का रहस्योद्घाटन" नामक ग्रंथ में ग्लूवेक दम्पजि ने जो भी सारांश दिए हैं. वे ध्यान देने योग्य हैं : अपचारी बालक अभिता उल्लंघनकारी प्राधिकार के प्रति विद्रोहशील, दूसरों के प्रति असहनशील संदेहात्मक, विध्वंसात्मक तथा भावोद्रेकी होते हैं। विफलता का भय हुने कम ही दबोचता है, इनमें आत्मसंयम तथा सहयोग का तत्त्व क्षीण होता है। ये अपने अधिकारों के प्रति अधिक सजग तथा मुखापेक्षी होते हैं । इसी प्रकार वृत्तिक अपराधियों, जैसे संपत्तिमूलक अपराधियों, चोरों, बटमारों का मनोविज्ञान प्रतिक्रियात्मक अपराधियों, जैसे बलात्कारियों या हत्यारों के मनोविज्ञान से भिन्न होता है। और इन अपराधियों के जो चांचल्य होते हैं। उनको कोटिबद्ध करने से जो समानतः क्रियात्मक विशिष्टताएँ उभरती है उनसे आपराधिक मनोविज्ञान का निर्माण हो सकता है।

मनोवैज्ञानिक केम्फ के अनुसार, जीव द्वारा स्वकेंद्रित प्रेरक शक्तियों और पर्यावरण की आवश्यकताओं के बीच समंजन की आभ्यासिक रीति को व्यक्तित्व कहते हैं। इस परिभाषा में केम्फ ने व्यक्तित्व संमजन पर अधिक बल दिया है। दूसरे शब्दों में, व्यक्ति को जो स्वकेंद्रित प्रेरक शक्तियाँ हैं, और पर्यावरण की जो आवश्यकताएँ हैं, इन दोनों में समंजन स्थापित करना व्यक्तित्व है। जो व्यक्ति पर्यावरण की माँगों का ध्यान नहीं रखता और केवल अपनी प्रेरक शक्तियों के वश में होकर कार्य करता है, उसका समंजन असंतोषजनक होगा और इसके फलस्वरूप उसका व्यक्तित्व भी निम्नकोटि का होगा । इसीलिए केम्फ ने व्यक्तित्व की व्याख्या करते समय समंजन पर अत्यधिक बल दिया। है। म्योरहेड के अनुसार, व्यक्तित्व, व्यक्ति के गठन, रुचि के प्रकारों, अभिवृत्तियों, व्यवहारों, क्षमताओं, योग्यताओं और प्रवणताओं का सबसे निराला संगठन है। मनोवैज्ञानिक बुडवर्थ ने व्यक्तित्व की व्याख्या करते हुए यह विचार व्यक्त किया है कि व्यक्तित्व व्यक्ति के व्यवहार का सकलगुण है। आगे चलकर बुडवर्थ ने व्यक्तित्व के लक्षण के विषय में कहा है कि व्यक्तित्व का लक्षण व्यवहार का कोई विशेष गुण होता है, जैसे प्रफुल्लता या आत्मनिर्भरता। सकल व्यक्तित्व 'गुणों' का योग होता है लेकिन यह पृथक–पृथक गुणों का केवल योग नहीं है वरन् कछ और भी है। उदाहरण के लिए एक व्यक्ति केवल हंसमुख और आत्मनिर्भर नहीं वरन् वह हंसमुख होते हुए आत्मनिर्भर है। व्यक्तित्व की अनगिनत परिभाषाएँ हैं। किसी परिभाषा में समंजन पर और किसी में सामाजिक मूल्यों पर बल दिया गया है।

हत्या, यौन अपराध संबंधी सर्वाधिक अध्ययन हुए हैं। इसमें भी इन अपराधों से किन उद्देश्य की पूर्ति संपन्न होते हैं, इस पक्ष की ही विशेष मीमांसा हुई जबकि उद्देश्यों की व्याख्या अपराध की समझ के लिए ही आवश्यक होती है। अपराध के निर्धारण के लिए नहीं। प्रेरणाओं की कई परतें होती हैं। सतह पर जो प्रेरणा द्रष्टव्य होती हैं, वह असली प्रेरणा से भिन्न हो सकती है। कभी–कभी किसी हत्या का कोई उद्देश्य ही नहीं दीख पड़ सकता है। कहीं आर्थिक लब्धि, कहीं यौन तुष्टि, कहीं प्रतिशोध, कहीं मात्र औत्सुक्य, हिंसाप्रियता दीख पड़ती है। व्यक्तित्व तथा प्रेरणा के योग से अपराध संपन्न हो सकता है, पर हर प्रकार के उद्देश्य से विभिन्न व्यक्ति एक ही प्रकार का अपराध कर सकता है, यह कदापि स्थापित नहीं किया जा सकता है। कारण कि व्यक्ति कोई कार्य केवल एक ही प्रयोजन से प्रेरित होकर नहीं करता और किसी एक कार्य के पीछे कई प्रयोजन होते हैं। हाँ, यह सही है कि कई प्रयोजनों के होते हुए भी उनमें से एक प्रयोजन प्रमुख होता है और मनोवैज्ञानिकों

PIF/6.500 *ASVS Reg. No. AZM 561/2013-14*

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-13, No.-II, Issues-17, YEAR- Sept. -2020

के अनुसार, अभिप्रेरणा कई प्रकार के प्रयोजनों से उत्पन्न होता हुआ भी मननीय है। अपराध के अभिप्रेरणों के अध्ययन से व्यक्तित्व की परतें खुल सकती हैं, परंतु मात्र अभिप्रेरण और व्यक्तित्व के योग से कोई आपराधिक अर्थ नहीं निकाला जा सकता है।

किशोर अपचार के संदर्भ में डब्लू० आई० टॉमस द्वारा मनोह्रास के चार प्रमुख स्रोतों पर ध्यान देना आवश्यक है। सुरक्षा, नए–नए अनुभव, अनुक्रिया तथा स्वी.ति की चार कामनाएँ प्रबल होती हैं। इन कामनाओं से केवल बालवृन्द या युवा ही नहीं वयस्क भी उत्प्रेरित रहते हैं।

मनोह्रास का एक प्रबल रूप अन्याय के बोध में भी प्रकट होता है। जैसा फ्रॉयड ने कहा है, न्याय संस्ति की प्रथम अपेक्षा है और जब किसी व्यक्ति को न्याय न मिलने का बोध हो जाता है तब वह हिंसाओं के रूप में आक्रोश व्यक्त करता है। कोई भी व्यक्ति अपनी क्रियाओं के लिए नैतिक आधार ढूँढ लेता है और न्याय के तकाजों में अपनी क्रियाएँ संपादित करता है। अपराधी भी क्रियाओं का पोषण इसी प्रक्रिया द्वारा ही करता है। अपराधियों में अधिकतर अपने न्याय का भाव प्रबल रहता है। जहाँ आदि मानव अपने न्याय के दैविक समझता था, वहाँ आधुनिक मानव सामाजिक समुदायिक या राज्ययी दमन, शोषण तथा अन्याय को अपनी विषमताओं तथा विफलताओं का जनक समझता है। इस प्रकार उत्पीड़न से अभिभुत होकर वह इन तंत्रों के नियमों का उल्लंघन करता है और विविध शब्दावली करता है। अपराधियों को दंड प्रणाली तथा न्याय विधान से भी घोर असंतुष्टि तथा अन्याय भाव की प्रतिक्रियाएँ हुआ करती हैं। अपराध की प्रत्यावृत्ति का एक मुख्य कारण यह भी होता है कि असमान दंड दान, कठोर कारावास तथा मुक्ति के पश्चात् किसी प्रकार कोई संवेदना तथा सहानुभूति अथवा पूनर्वास की व्यवस्था का अभाव रहता है। यदि सुधारालयों में कोई भी प्रशिक्षित भी किया जाता है, तब उसकी अन्याय–वेदना पूर्णतः शमित नहीं हो पाती है और बहुधा एक ही प्रकार के अपराध के लिए विभिन्न प्रकार के दंड, दान आदि से भी अपराधियों की ऐसी भावना को ठेस पहुँचती है। अन्याय–बोध प्रांरभ में अपराध का जनन करता है। फिर इससे आपराधिक नियतों को बल मिलता है और अपराध को प्रत्यावर्तित करने का प्रोत्साहन भी अर्थात अन्याय की स्थितियाँ नहीं रहने पर भी किसी व्यक्ति की परख में ऐसी स्थितियाँ बनी हुई होती है तथा दीख पड़ सकती हैं और इन भ्रांतियों का कोई आधार न रहने पर भी अपराधिता को अग्रसर को करने में बड़ा महत्त्वपूर्ण योगदान होता है। क्रोध भाव के अतिरिक्त ईर्ष्या तथा द्वेष भाव भी अपराध के प्रकटीकरण में महत्त्वपर्ण भूमिका संपन्न करते हैं। अन्याय–बोध तथा ईर्ष्या भाव में सा.श्यता भी है, फिर भी यह देखा गया है कि बहुतेरे अपराधों में अपराधी बर्बर हिंसाएँ कर बैठता है, पतियों द्वारा पत्नियों की हत्याओं में अंग–प्रत्यंग को क्षत–विक्षत, विलुप्त करने की प्रवृत्ति किसी अन्य व्यक्ति द्वारा इन अंगों की लब्धि न हो, इसमें देखी जाती है। समलिंग–यौन आचारियों में इस प्रकार की प्रवृत्ति अत्यंत भयावह रूप लिया करती है ।"

असामाजिक भावनाओं में सत्ता की कामना अत्यंत प्रबल होती है, यह सत्ता, भले ही राजनैतिक, आर्थिक हो या मात्र लालच तथा स्व–प्रदर्शन की कामना हो। कोलिन विल्सन ने अपनी मीमांसा में सभी उग्रपंथियों को समाजशास्त्र में विद्रोहियों को "बाहरी व्यक्ति" की संज्ञा दी है और कहा है कि अपनी दुर्बलताओं, मानवीय दुर्बलताओं और दुःख से घृणा करता है और इन्हें विजित करने के लिए यह आवश्यक समझता है कि उसे कुछ निश्चित कार्य करना है जिससे लोक आत्मा जाग्रत हो सके और इस प्रक्रिया में वह विद्रोह को स्पष्टतः व्यक्त करता है।

उपर्यक्त विश्लेषणों से यह निष्कर्ष निकलता है कि सामान्य अपराधी किसी प्रकार की मानसिक विक्षिप्ति ग्रसित नहीं करती है, उनके मनोविज्ञान की भी कुछ व्यापक रूप–रेखाएँ तथा गतिविधियाँ होती हैं। इन रूप–रेखाओं तथा गतिविधियों का मनुष्य के सामान्य स्वभाव, अभिप्रेरणा, भाववृत्ति आदि से संबंध होता है और इनकी मात्राओं पर ही आपराधिकता भी प्रसूत होती है और बनी रहती है। बिल्कुल ही सामान्य सामाजिक जीवन बिताते हुए भी अपराधी अपने चित्त से, मन से तथा पर्यावरण के प्रभाव को ग्रहण कर हिंसा करता है जो हिंसा उसके आक्रोश तथा विद्रोह के रूप में प्रकट होती है। यह भी स्पष्ट होता जाता है कि अपराध समाज का एक स्वाभाविक रूप होता है और कोई भी समाज इससे मुक्त नहीं रह सकता है चूँकि अपराधिता मुनष्य की स्वाभाविक प्रवृत्ति है और प्रश्न केवल इसके उग्र या साधारण प्रकटीकरण का रहता है, इसका उन्मुलन संभव नहीं हो सकता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. हरमन मैनहम : कम्पेरेटिव क्रिमिनालॉजी, पृ०–282–283
2. मित्रोस्टा मल्टिफेजिक पर्सनालिटी इन्वेट्री (एम०एम०पी०आई०)
3. हरमन मैनहम– कं० क्रिमिनालॉजी, पृ०–291
4. वही, पृ०–242
5. डॉ० जायसवाल, श्री रामेश्वर गुप्तः मनोविज्ञान की भूमिका, पृ०–242

*****

PIF/6.500 *ASVS Reg. No. AZM 561/2013-14*